गोरा

अध्याय 9

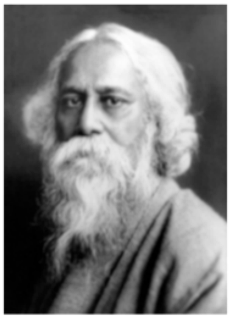

रविंद्रनाथ टैगोर

गोरा

अध्याय 9

https://www.hindiadda.com/gora-part-ix/

गोरा जिस समय यात्रा पर निकला उसके साथ अविनाश, मोतीलाल, वसंत और रमापति, ये चार साथी थे। लेकिन गोरा के निर्दय उत्साह के साथ ये लोग लयबध्दता नहीं रख सके। बीमार हो जाने का बहाना करके अविनाश और वसंत तो चार-पाँच दिन में ही कलकत्ता लौट आए। केवल गोरा के प्रति श्रध्दा के कारण ही मोतीलाल और रमापति उसे अकेला छोड़कर वापिस नहीं आ सके, अन्यथा उनके कष्टों की सीमा नहीं थी। गोरा न तो पैदल चलकर थकता था, न कहीं रुके रह जाने से ऊबता था। गाँव का जो कोई गृहस्थ ब्राह्मण जानकर गोरा को श्रध्दापूर्वक घर में ठहराता, उसके यहाँ भोजन इत्यादि की चाहे जितनी असुविधा हो, तब भी गोरा वहीं टिका रहता था। गाँव-भर के लोग उसकी बात सुनने के लिए उसके चारों ओर इकट्ठे हो जाते और उसे छोड़ना ही न चाहते।

पढ़े-लिखे भद्र समाज और कलकत्ता के समाज के बाहर हमारा देश कैसा है, गोरा ने यह अभी पहले-पहल देखा। यह विशाल अकेला भारतवर्ष ग्राम कितना तितर-बितर, कितना संकीर्ण और दुर्बल है, अपनी शक्ति के संबंध में कैसा अत्यंत भ्रमित और अपने शुभ के संबंध में यज्ञ और उदासीन। हर पाँच-सात कोस की दूरी पर उसका समाज इतना बदल जाता है, संसार के बृहत् कर्म-क्षेत्र में चलने के उसके मार्ग में कितनी अपनी गढ़ी हुई या काल्पनिक अड़चनें हैं, छोटी-छोटी बातों को वह कितना बढ़ा-चढ़ाकर देखता है और उस पर किसी भी रूढ़ि का बंधन कितना कसा हुआ और अटूट है, उसका मन कैसा सोया हुआ, उसके प्राण कितने दुर्बल और उसका उद्यम कितना क्षीण है- यह गोरा ग्रामवासियों के बीच ऐसे रहे बिना किसी तरह कल्पना भी न कर सकता थ। उसके गाँव में रहते-रहते वहाँ के एक हिस्से में आग लग गई थी। इतने बड़े संकट में भी एक होकर प्राणपण से कोशिश करके विपत्ति का सामना करने की शक्ति उनमें कितनी कम है, गोरा यह देखकर विस्मय में पड़ गया। हक्के-बक्के से सभी इधर-उधर दौड़ रहे थे और रो-चीख रहे थे, पर व्यवस्थिति ढंग से कोई कुछ नहीं कर पा रहा था। गाँव के पास कोई जलाशय भी नहीं था। स्त्रियाँ रोज़ाना दूर से पानी लाकर घर का काम चलाती हैं, फिर भी रोज़-रोज़ की इस मुसीबत से बचने के लिए घर ही में एक मामूली कुऑं खोद लेने की बात उन तक को न सूझी थी जो कि काफी संपन्न थे। पहले भी इस गाँव में कई बार आग लगी है, उसे केवल भाग्य का प्रकोप मानकर सभी हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे हैं, पास कहीं पानी की कोई व्यवस्था कर रखने की कोई कोशिश किसी ने नहीं की। गाँव की ऐसी ज़रूरत के बारे में भी जिनका बोध नहीं चेता, उनके सामने सारे देश की बात करना गोरा को बेवकूफी ही लगी।

गोरा को सबसे अधिक विस्मय इसी बात पर होता कि इन सब दृश्यों और घटनाओं से मोतीलाल और रमापति ज़रा भी विचलित न होते थे, बल्कि गोरा के क्षोभ को भी असंगत समझते थे। छोटे लोग तो ऐसा करते ही हैं, ऐसे सोचते ही हैं, वे इन सब कष्टों को कष्ट नहीं समझते। छोटे आदमियों के लिए ऐसा छोड़कर और कुछ कभी हो भी सकता है ऐसा सोचने को ही वे अपनी औकात से बड़ी बात करना समझते हैं। इस अज्ञता, जड़ता और दु:ख का बोझ कितना भारी और भयंकर है और यह बोझ हमारे पढ़े-लिखे और अनपढ़, धनी और निर्धन, सभी के कंधों पर एक-सा है और किसी को भी आगे नहीं बढ़ने देता, आज यह बात अच्छी तरह समझकर गोरा का चित्त हर पल व्याकुल रहने लगा।

घर से कोई शोक-संदेश मिलने की बात कहकर मोतीलाल भी चल दिया। केवल रमापति गोरा के साथ रह गया।

घूमते-फिरते दोनों एक नदी के किनारे बसे एक मुसलमान गाँव में पहुँचे। आतिथ्य पाने की उम्मीद में सारे गाँव में घूमते-घूमते केवल एक घर हिंदू नाई का मिला। उसी के घर दोनों ब्राह्मणों ने आश्रय लेने जाकर देखा, बूढ़ा नापित और उसकी पत्नी एक मुसलमान लड़के को पाल-पोस रहे हैं। रमापति बड़ा धर्मभीरु ब्राह्मण था, वह तो बहुत बेचैन हो उठा। नापित को गोरा ने उसके अनाचार के लिए फटकारा तो उसने कहा, "ठाकुर, हम लोग कहते है। हरि, वे लोग कहते हैं अल्लाह, दोनों में कोई भेद नहीं है।"

धूप तेज़ हो चली थी, फैली हुई रेतों के पार बहुत दूर नदी थी। रमपाति ने प्यास से व्याकुल होकर पूछा, "हिंदू का पीने का पानी कहाँ मिलेगा?"

एक कच्चा कुऑं नापित के घर में था, लेकिन उस भ्रष्ट कुए का पानी रमापति कैसे पी सकता था? वह मुँह लटकाकर बैठा रहा।

गोरा ने पूछा, "इस लड़के के माँ-बाप नहीं है?"

नापित ने कहा, "दोनों हैं, लेकिन उनका होना-न होना बराबर है।"

गोरा ने पूछा, "वह कैसे?"

जो इतिहास नापित ने सुनाया संक्षेप में वह यों है-

"जिस ज़मींदारी में वे लोग रहते थे निलहे साहबों का उस पर इजारा था। नदी-किनारे की खादर ज़मीन को लेकर वहाँ की प्रजा का नील-कोठी के साहबों के साथ बराबर झगड़ा चल रहा था। और प्रजा तो हार मान चुकी थी, लेकिन खादर के इस घोषपुर गाँव की प्रजा को साहब लोग किसी प्रकार नहीं दबा सके हैं। गाँव के सभी लोग मुसलमान हैं और उनका प्रधान फरू सरदार किसी से नहीं डरता। नील-कोठी वालों से झगड़े के चलते पुलिस से मार-पीठ करके दो बार जेल भी हो आया है। घर की आर्थिक हालत ऐसी हो गई कि खाने को दो कौर भात नहीं जुटता, फिर भी वह किसी का रौब नहीं मानता। इस बार खादर में खेती करके गाँव के लोगों ने कुछ बोरे धान पा लिया था- लेकिन कोई एक महीना पहले नील-कोठी के मैनेजर साहब लठैत लेकर स्वयं आए और प्रजा का धान लूटकर ले चले। फरू सरदार ने इसी झगड़े के समय साहब की दाहिनी बाँह पर ऐसी लाठी जमाई की अस्पताल ले जाकर उसकी बाँह कटवानी पड़ गई। सारे इलाके में इतना बड़ा हौसला कभी किसी ने नहीं किया था। तब से पुलिस का आतंक आग की तरह गाँव-गाँव में फैल गया है।

प्रजा के घरों में कहीं कुछ नहीं रहा, घरों की औरतों की इज्ज़त-आबरू भी सुरक्षित नहीं, फरू सरदार के साथ और बहुत-से दूसरे लोग हवालात में बंद कर दिए गए हैं और अनेकों गाँव छोड़कर भाग गए हैं। फरू के परिवार के पास खाने को अन्न का दाना नहीं है,उसकी बहू की एकमात्र धोती का यह हाल है कि लज्जावश घर से बाहर नहीं निकल सकती। उनका इकलौता लड़का तमीज़ नापित की स्त्री को गाँव के नाते से मौसी पुकारता था, उसकी मोहताज हालत देखकर नाइन उसे अपने घर ले आई और उसका पालन कर रही है। नील-कोठी वालों की एक कचहरी वहाँ से लगभग डेढ़ कोस पर लगी है, दल-बल के साथ दरोगा अब भी वहीं मौजूद है। वहाँ से कब किस बहाने वह गाँव पर धावा कर दे या क्या कर बैठे इसका कोई ठिकाना नहीं है।

अभी कल ही नाई के पड़ोसी बूढ़े नाज़िम के घर पर पुलिस ने छापा मारा था- नाज़िम का जवान साला दूसरे इलाके से अपनी बहन से मिलने आया हुआ था- बिल्कुल बिना वजह दारोगा ने यह कहकर कि 'यह पट्ठा अच्छा जवान दीखता है- छाती तो देखो पट्ठे की!' अपने हाथ की लाठी से उसे ऐसा धक्का दिया कि उसके दाँत टूट गए और खून बह निकला। यह अत्याचार देखकर बहन दौड़ी हुई आई तो उस बेचारी बुढ़िया को भी धक्का देकर गिरा दिया गया। पहले इस इलाके में पुलिस इतना जुल्म करने का साहस नहीं करती थी पर अब गाँव के सब तगड़े जवान या तो हवालात में हैं या गाँव छोड़कर भाग गए हैं। उन भागे हुए लोगों की तलाश का बहाना करके ही पुलिस गाँव पर ऐसा कहकर ढा रही है, इससे कब छुटकारा होगा कुछ कहा नहीं जा सकता।"

इधर गोरा उठने का नाम ही नहीं ले रहा था। उधर रमापति की प्यास के मारे जान जान निकल रही थी। नाई की कहानी समाप्त होने से पहले ही उसने फिर पूछा, "कोई हिंदू घर यहाँ से कितनी दूर होगा?"

नाई ने कहा, "वही डेढ़ कोस पर जो नील-कोठी की कचहरी है, उसका तहसीलदार ब्राह्मण है- नाम है माधव चटर्जी।"

गोरा ने पूछा, "स्वभाव कैसा है?"

नाई ने कहा, "ठीक यमदूत जैसा। ऐसा निर्दई और दुष्ट ढूँढे से भी नहीं मिलेगा। दारोगा को जितने दिन खिलाए-पिलाएगा उसका सब खर्चा हमीं लोगों से वसूल करेगा- बल्कि कुछ मुनाफा भी कमाएगा।"

रमापति ने कहा, "गोरा बाबू, अब चलिए- और नहीं सहा जाता।"

उस मुसलमान लड़के को नाइन अपने ऑगन के कुएँ के पास खड़ा करके घड़े भर पानी खींचकर नहलाने लगी थी, इस बात से रमापति को और भी गुस्सा आ रहा था और उससे वहाँ बैठा नहीं जा रहा था। चलते समय गोरा ने नाई से पूछा, "तुम तो इस दंगे-फसाद के बीच भी इसी गाँव में टिके हुए हो- तुम्हारे घर के और लोग कहीं नहीं हैं?"

नाई ने कहा, "काफी दिनों से यहीं रहता हूँ, इन सबसे मोह हो गया है। मैं हिंदू नाई हूँ, खेती-वेती से मुझे कोई मतलब नहीं है। इसीलिए नील-कोठी वाले मुझे कुछ नहीं कहते। और फिर गाँव-भर में कोई बड़ा तो और रहा नहीं, मैं भी अगर चल दूँ तो औरतें डर से मर जाएँगी।"

गोरा ने कहा, "अच्छा खा-पीकर मैं फिर आऊँगा।"

भूखा-प्यासा रमापति नील-कोठी वालों के अत्याचार की इस लंबी कहानी से उल्टे गाँवा वालों पर ही और बिगड़ उठा। ये मूर्ख बलवान के विरुध्द सिर उठाना चाहते हैं, इसे उसने इन गँवार मुसलमानो की स्पर्धा और बेवकूफी की चरम सीमा ही समझा। इसमें उसे संदेह नहीं था कि सख्त सज़ा देकर इनकी अकड़ ढीली करना ही इनके लिए उचित होगा। ऐसे अभागों पर पुलिस अत्याचार करती ही है, करने को बाध्य होती है और उसकी ज़िम्मेदारी मुख्यतया इन्हीं लोगों पर होती है, यही उसकी धारणा

थी। कर्मचारियों से समझौता ही कर लें, दंगा-फसाद क्यों करते हैं? इनमें उतनी ताकत भी कहाँ हैं?

वस्तुत: नील-कोठी के साहबों की ओर ही रमापति की भीतरी सहानुभूति थी।

दोपहर की तेज़ धूप में तपी हुई बालू पर चलते हुए गोरा ने सारे रास्ते-भर कोई बात नहीं की। अंत में जब पेड़ों की ओट से कुछ दूर पर कचहरी की छत दिखाई देने लगी तब सहसा गोरा ने रुककर कहा, "रमापति, तुम जाकर कुछ खा-पी लो, मैं उसी नाई के घर जा रहा हूँ।"

रमापति बोला, "यह कैसी बात है- आप नहीं खाएँगे? चटर्जी के यहाँ खा-पीकर फिर जाइएगा।"

गोरा ने कहा, "मैं अपना कर्तव्य करूँगा, तुम खा-पीकर कलकत्ता लौट जाना- मुझे यहीं घोषपुर गाँव में शायद कुछ दिन रहना होगा- तुमसे वह नहीं निभ सकेगा।"

सुनकर रमापति के तो रोंगटे खड़े हो गए। गोरा-जैसा धर्मशील हिंदू किस मुँह से उन म्लेच्छों के घर रहने की बात कह सकता है, वह सोच ही नहीं सका। खाना-पीना छोड़कर गोरा ने क्या भूख हड़ताल करने की ठानी है? लेकिन तब ज्यादा सोचने का भी समय कहाँ था, उसे एक-एक पल एक-एक युग जान पड़ रहा था। गोरा का साथ छोड़कर कलकत्ता भाग जाने के लिए उससे अधिक अनुरोध नहीं करना पड़ा। कुछ दूर से उसने घूमकर देखा, गोरा की लंबी देह अपनी छोटी-सी छाया को फलाँगती हुई दोपहर की तेज धूप में सुनसान गर्म रेती के पार अकेली बढ़ती चली जा रही है।

हालाँकि गोरा भी भूख-प्यास से बेचैन हो रहा था पर उस दुष्ट अत्याचारी माधव चटर्जी का अन्न खाकर ही उसकी जाति बचेगी, इस बात को जितना ही वह सोचता उतना ही वह और असह्य होती जाती। उसका चेहरा और आँखें लाल हो गई थीं, सिर तप रहा था, उसके मन में एक तीव्र विद्रोह उठ रहा था। वह सोच रहा था पवित्रता को बाहर की चीज़ बनकार भारतवर्ष में हम यह कितना भयंकर अधर्म कर रहे हैं- जान-बूझकर जो आदमी फसाद खड़ा करके इन मुसलमानो पर जुल्म ढा रहा है उसके घर में मेरी जाति बनी रहेगी, और जो उस जुल्म को सहकर भी मुसलमान के बच्चे की रक्षा कर रहा है और समाज की निंदा सहने को तैयार है उसके घर में मेरी जाति नष्ट हो जाएगी? जो हो, आचार-विचार के भले-बुरे की बात फिर सोचूँगा- अभी तो नहीं सोच सकता।

गोरा को अकेले लौटते देखकर नाई को आश्चर्य हुआ। गोरा ने पहले तो आकर नाई का लोटा अच्छी तरह अपने हाथ में माँजकर कुएँ से पानी खींचकर पिया, फिर बोला, "घर में कुछ दाल-चावल हो तो दो, मैं बनाकर खाऊँगा।" हड़बड़ाकर नाई ने सब सामान जुटा दिया। खाने से निटकर गोरा ने कहा, "मैं दो-चार दिन तुम्हारे पास ही ठहरूँगा॥"

डरकर हाथ जोड़ते हुए नाई ने कहा, "इस अधम के घर आप ठहरेंगे इससे बड़ा सौभाग्य मेरे लिए और क्या होगा- पर देखिए, हम लोगों पर पुलिस की नज़र आपके रहने से न जाने क्या उपद्रव उठ खड़ा हो।"

गोरा ने कहा**, "**मेरे यहाँ रहते पुलिस को कोई उत्पात करने का साहस नहीं होगा। यदि कुछ करेगी तो मैं रक्षा करूँगा।**"**

नाई ने कहा**, "**मेरे यहाँ रहते पुलिस को कोई उत्पात करने का साहस नहीं होगा। यदि कुछ करेगी तो मैं रक्षा करूँगा।**"**

नाई ने कहा, "दुहाई है आपकी, आप यदि रक्षा करने की कोशिश करेंगे तब तो और भी कोई उपाय न रहेगा। वे लोग सोचेंगे कि मैंने ही साठ-गाँठ करके आपको बुलाया है और उनके खिलाफ गवाह जुटा रहा हूँ। अब तक तो किसी तरह टिका हुआ था, फिर नहीं टिक सकूँगा। अगर मुझे भी यहाँ से उठ जाना पड़ा तब तो गाँव अनाथ ही हो जाएगा।"

हमेशा से गोरा शहर में रहता आया है, नाई क्यों इतना भयभीत था यह समझना भी उसके लिए कठिन था। वह यही जानता था कि इंसाफ के लिए डटकर खड़े हो जाने से ही अन्याय का प्रतिकार होता है। उसकी कर्तव्य-बुध्दि किसी तरह उस विपन्न गाँव को असहाय छोड़कर जाने की आज्ञा नहीं दे रही थी। तब नाई ने उसके पैर पकड़कर कहा, "देखिए, आप ब्राह्मण हैं, मेरे पुण्य-फल से मेरे घर अतिथि हुए हैं, आपको चले जाने को कहता हूँ, तो इससे मुझे पाप लगता है लेकिन आपके मन में हम लोगों के प्रति दया है, यह जानकर ही कहता हूँ कि मरे घर रहकर आप पुलिस के अत्याचार में कोई बाधा देंगे तो मुझे ही और बड़ी मुसीबत में डाल देंगे।"

गोरा नाई के इस डर को व्यर्थ की कापुरुषता मानकर कुछ विरक्त होकर ही तीसरे पहर उसके घर से चल पड़ा। इस म्लेच्छाचारी के घर उसने भोजन किया है, यह सोचकर मन-ही-मन उसे ग्लानि भी होने लगी। शरीर से थका हुआ और चित्त से विरक्त वह साँझ को नील-कोठी की कचहरी पर जा पहुँचा। रमापति ने खा-पीकर

कलकत्ता रवनाना हो जाने में जरा भी देर नहीं की थी, इसलिए वह वहाँ नहीं मिला। माधव चटर्जी ने बड़ी आव-भगत के साथ गोरा को भोजन के लिए निमंत्रित किया। गोरा ने आग-बबूला होकर कहा "मैं आपके यहाँ का पानी भी नहीं पी सकता।"

विस्तिम होकर माधव ने कारण पूछा, तो गोरा ने उसे अत्याचारी और अन्यायी कहकर फटकार दिया और बैठने से भी इंकार किया। दारोगा तख्तपोश पर तकिए के सहारे बैठा हुआ हुक्का गुड़गुड़ा रहा था, तब उठकर बैठते हुए उसने रुखाई से पूछा, "कौन हो जी तुम? घर कहाँ है?"

गोरा ने उसके पश्न का उत्तर न देकर कहा, "तो तुम्हीं दारोगा हो? घोषपुर गाँव में जो जुल्म तुमने किया है मैंने सब सुना है। अब भी अगर न सँभले तो.... "

"तो क्या फाँसी दोगे? ज़रा इसका हौसला तो देखो। मैं तो समझा था भीख माँगने आया है, यह तो लाल-पीला होने लगा। अरे, तवारी!"

घबराकर माधव ने दारोगा का हाथ दबाते हुए कहा**, "**अरे क्या करते हो**,** अच्छे घर का है बेइज्ज़ती नहीं है**?"**

माधव बोला, "वह जो कहते हैं बहुत झूठ तो नहीं कहते-गुस्सा करने से क्या होगा? नील-कोठी के साहबों की गुमाश्तागिरी करके खाता हूँ, इससे आगे तो और कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है, और दादा, तुम गुस्सा मत करो- तुम पुलिस के दारोगा हो, तुम्हें यम का दूत कहना कुछ गाली थोड़े ही है? बाघ तो आदमी मार खाएगा ही- कोई वैष्णव तो है नहीं- मानी हुई बात है। उसे खाना तो होगा ही, वह और क्या करेगा?"

बिना प्रयोजन माधव को क्रोध करते कभी किसी ने नहीं देखा, किससे कब कौन-सा काम निकाला जा सकता है, या टेढ़े होने पर कौन क्या हानि पहुँचा सकता है, यह पहले से कौन ठीक जानता है? किसी का भी बुरा या अपमान वह अच्छी तरह हिसाब जाँचने के बाद ही करता था- गुस्से में किसी पर हमला करके अपनी क्षमता को फिजूल में खर्च नहीं करता था।

तब दारोगा ने गोरा से कहा, "देखो जी, यहाँ हम लोग सरकारी काम करने आए हैं- इसमें टाँग अड़ाने या गोलमाल करने से मुसीबत में पड़ जाओगे।"

बिना कुछ कहे मुड़कर गोरा बाहर चला गया। माधव जल्दी से उठकर उसके पीछे-पीछे जाकर बोला, "महाशय, आप जो कहते हैं सही है- हमारा काम ही कसाई

का है- और यह जो साला दारोगा है इसके तो साथ बैठने में भी पाप लगता है- लेकिन जो-जो ज़ुल्म उसके द्वारा करवाने पड़ते हैं मैं ज़बान पर भी नहीं ला सकता। और अधिक दिन नहीं है, दो-तीन बरस और नौकरी करके लड़कियों को ब्याहने का साधन जुटाकर फिर हम स्त्री-पुरुष दोनों काशीवास को चल देंगे। मुझे खुद यह सब अच्छा नहीं लगता- कभी-कभी तो मन होता है, गले में फाँसी डालकर लटक जाऊँ। खैर, अब आज रात आप कहाँ जाएँगे- यहीं भोजन करके विश्राम कर लें। उस दारोगा साले की सूरत भी आपको नहीं दिखेगी- आपके लिए सब बंदोबस्त अलग कर दूँगा।"

गोरा को साधारण लोगों से कुछ अधिक भूख लगती थी, और आज दिन-भर उसे ठीक से खाने को नहीं मिला था। लेकिन अभी उसका सारा शरीर गुस्से से जल रहा था। किसी तरह वह वहाँ न रुक सका। बोला, "मुझे ज़रूर काम है।"

माधव ने कहा**, "**तो रुकिए**,** एक लालटेन साथ कर दूँ।**"**

गोरा ने कोई जवाब नहीं दिया, तेज़ी से चला गया। लौटकर माधव ने दारोगा से कहा, "दादा, यह आदमी ज़रूर सदर गया है। तुम अभी मजिस्ट्रेट के पास किसी को भेजो।"

दारोगा ने कहा**, "**क्यों**,** किसलिए**?"**

माधव बोला, "और तो कुछ नहीं, बस उन्हें एक बार कह आए कि एक भद्र जन न जाने कहाँ से आकर गवाहों को तोड़ने की कोशिश करता हुआ घूम रहा है।"

27.शाम को मजिस्ट्रेट ब्राउनलो साहब नदी-किनारे की सड़क पर टहल रहे थे, हरानबाबू उनके साथ थे। थोड़ी दूर पर गाड़ी में उनकी मेम परेशबाबू की लड़कियों के साथ हवाख़ोरी कर रही थी।

बीच-बीच में ब्राउनलो साहब बंगाली भद्र-समाज के लोगों को अपने घर गार्डन-पार्टियों में आमंत्रित करते रहते थे। ज़िले के एंट्रेस स्कूल के पुरस्कार-वितरण समारोह के समय सभापतित्व भी वही करते थे। संपन्न घरों में विवाह आदि शुभ संस्कारों के समय आमंत्रित किए जाने पर अनुग्रहपूर्वक वह उसे स्वीकार कर लेते थे। यहाँ तक कि यात्रा-अभिनय की मजलिस में निमंत्रित होने पर एक बड़ी आराम-कुर्सी पर बैठे-बैठे कुछ देर तक धैर्यपूर्वक गान सुनने का प्रयत्न भी करते थे। उनकी अदालत के सरकारी वकील के यहाँ पिछले दशहरे की झाँकियों में जो लड़के भिश्ती और महतरानी बने थे, मजिस्ट्रेट साहब ने उनका अभिनय विशेष रूप से

पसंद किया था और उनकी फर्माइश पर झाँकियों के इस अंश का कई बार प्रदर्शन किया गया था।

इनकी पत्नी मिशनरी की लड़की थीं। इसलिए जब-तब उनके घर मिशनरी औरतों की चाय-पान की महफिल जुटती रहती थी। ज़िले में उन्होंने एक लड़कियों का स्कूल स्थापित किया था और बराबर इसके लिए प्रयास करती थीं कि उस स्कूल में छात्राओं की कमी न हो। परेशबाबू के घर की लड़कियों में पढ़ाई की विशेष चर्चा होती देखकर बराबर वह उनका हौसला बढ़ाती रहती थीं, दूर रहने पर भी बीच-बीच में चिट्ठी-पत्री देती रहती थीं। क्रिसमस के समय उन्हें धर्म-ग्रंथ उपहार स्वरूप भेजती थीं।

पंडाल लग गया था। हरानबाबू, सुधीर और विनय को साथ लेकर वरदासुंदरी और उनकी लड़कियाँ सभी आई थीं- उन सबको सरकारी डाक-बँगले में ठहराया गया था। परेशबाबू को यह सब पसंद नहीं था इसलिए वह अकेले कलकत्ता में ही रह गए थे। उनका साथ देने के लिए सुचरिता ने वहीं रह जाने की बहुत कोशिश की थी, परंतु परेशबाबू ने मजिस्ट्रेट के निमंत्रण के संबंध में कर्तव्य का विशेष उपदेश देकर सुचरिता को भेज दिया था। तय यह हुआ था कि दो दिन बाद मजिस्ट्रेट के घर डिनर के बाद ईवनिंग पार्टी में कमिश्नर साहब और पत्नी सहित छोटे लाट साहब के सम्मुख परेशबाबू की लड़कियों का अभिनय और काव्य-आवृत्ति आदि होगा। उसके लिए मजिस्ट्रेट ने अनेक अंग्रेज़-बंधुओं को ज़िले और कलकत्ता तक से बुलाया था। गिने-चुने कुछ बंगाली भद्र जनों का भी प्रबंध किया गया था, उनके लिए बगीचे में एक अलग तंबू में ब्राह्मण रसोइए द्वारा जल-पान तैयार कराने की व्यवस्था की जाएगी, ऐसा सुना गया था।

थोड़े समय में ही हरानबाबू ने अपनी उच्च कोटि की बातचीत से मजिस्ट्रेट साहब को काफी संतुष्ट कर लिया था। ख्रिस्तान धर्मशास्त्र के विषय में हरानबाबू का असाधारण ज्ञान देखकर साहब आश्चर्यचकित हो गए थे। उन्होंने हरानबाबू से यहाँ तक पूछ लिया था कि ख्रिस्तान धर्म स्वीकार करने में ही वह क्यों पीछे रह गए?

आज शाम को नदी-किनारे की सैर के समय वह हरानबाबू के साथ ब्राह्मण-समाज की कार्य-प्रणाली और हिंदू-समाज के सुधार के बारे में गंभीर चर्चा कर रहे थे। इसी समय 'गुड ईवनिंग, सर' कहता हुआ गोरा उनके सम्मुख आ खड़ा हुआ।

उससे पहले दिन भी मजिस्ट्रेट साहब से मुलाकात की कोशिश करने पर यह उसकी समझ में आ गया था कि साहब के पास आने से पहले उनके प्यादे को नज़राना देना

पड़ता है। यह दंड और अपमान स्वीकार न करने का निश्चय करके आज वह साहब के हवाख़ोरी करने के समय उनके सामने उपस्थिति हुआ है। इस साक्षात् के समय हरानबाबू अथवा गोरा की ओर से परिचय का कोई उत्साह नहीं देखा गया।

साहब आगंतुक को देखकर कुछ विस्मित हो गए। ऐसा छः फुट से अधिक ऊँचा, लंबा-तगड़ा जवान उन्होंने बंगाल में अब से पहले कभी देखा हो,यह उन्हें याद नहीं पड़ा। उसका रंग भी साधारण बंगालियों-जैसा नहीं था। शरीर पर खाकी रंग का कुर्ता, मोटी मैली धोती, हाथ में बांस की लाठी,चादर सिर पर पगड़ी की तरह बँधी हुई थी।

मजिस्ट्रेट से गोरा ने कहा, "मैं घोषपुर गाँव से आया हूँ।"

मजिस्ट्रेट साहब ने विस्मय सूचक हल्की-सी सीटी बजाई। घोषपुर के मामले में कोई गैर आदमी टाँग अड़ा रहा है, इसकी सूचना उन्हें एक दिन पहले ही मिल चुकी थी। शायद यही वह आदमी है। सिर से पैर तक गोरा को एक तीखी नज़र से देखकर उन्होंने पूछा, "तुम कौन जात हो?"

गोरा बोला, "बंगाली ब्राह्मण हू।"

साहब बोले, "ओह! किसी अख़बार से संबंध है शायद?"

गोरा ने कहा, "नहीं।"

मजिस्ट्रेट बोले, "घोषपुर में तुम क्या करने आए?"

गोरा ने कहा, "घूमता हुआ वहाँ जा ठहरा था। पुलिस की ज्यादती से गाँव की दुर्गति होती हुई देखकर तथा नए उपद्रव की आशंका जानकर उसे रोकने के लिए आपके पास आया हूँ।"

मजिस्ट्रेट ने कहा, "घोसपुर गाँव के लोग बड़े बदमाश हैं, यह तुम्हें मालूम है?"

"वे बदमाश नहीं हैं," गोरा बोला, "निर्भीक और आज़ाद-दिमाग हैं। अत्याचार चुपचाप नहीं सह सकते।"

मजिस्ट्रेट बिगड़ उठे। उन्होंने मन-ही-मन सोचा-नए बंगाली इतिहास की पुस्तकें पढ़कर बहुत बातें सीख गए हैं- इनसे फरेब.... प्रकट में गोरा को डपटकर बोले, "यहाँ के हालात का तुम्हें कुछ पता नहीं है।"

मेघ गंभीर स्वर में गोरा ने जवाब दिया, "यहाँ के हालात का आपको और भी कम पता है।"

मजिस्ट्रेट ने कहा "मैं तुम्हें ख़बरदार किए देता हूँ, घोसपुर के मामले में यदि कोई दख़ल दोगे तो सस्ते में नहीं छूटोगे।"

गोरा ने कहा, "जब आपने तय ही कर लिया है कि अत्याचार को रोकने की कार्यवाही नहीं करेंगे, और गाँव के लोगों के बारे में भी पहले से मिथ्या धारणा बना ली है तब मेरे पास इसके अलावा और कोई चारा नहीं है कि गाँव के लोगों को पुलिस के मुकाबले में खड़े होने के लिए बढ़ावा दूँ।"

चलते-चलते मजिस्ट्रेट रुक गए और बिजली की तेज़ी से-गोरा की ओर पलटकर गरज उठे, "क्या तुम्हारी इतनी मजाल!"

और कुछ कहे बिना गोरा धीरे-गति से चला चला गया। मजिस्ट्रेट, "हरानबाबू, आपके देश के लोग "क्या-तुम्हारी इतनी मजाल!"

हरानबाबू ने कहा, "पढ़ाई-लिखाई व्यवस्थिति ढंग से नहीं होती, विशेषकर आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा देश में होती ही नहीं; इसीलिए ये सब बातें होती हैं। अंग्रेज़ी शिक्षा का जो उत्तम अंश है वह ग्रहण करने का अधिकार इन लोगों को नहीं है। भारतवर्ष में अंग्रेज़ों का राज्य नियति का ही विधान है, ये अकृतज्ञ लोग अब भी इस बात को स्वीकार करना नहीं चाहते। एक मात्र कारण इसका यही है कि इन लोगों ने केवल किताबें रट ली हैं, इनका धर्म-बोध बिल्कुल अधूरा है।

मजिस्ट्रेट बोले, "क्राइस्ट को स्वीकार किए बिना भारतवर्ष का धर्म-बोध कभी नहीं हो सकता।"

हरानबाबू ने कहा, "एक तरह से यह सच ही है।"

यों कहते हुए हरानबाबू ने ईसा को स्वीकार करने के बारे में एक ईसाई में और हरानबाबू में कहाँ तक सहमति है और कहाँ मतभेद, इसके सूक्ष्म विवेचन में मजिस्ट्रेट को इतना उलझा लिया कि मेम साहब जब परेशबाबू की लड़कियों को डाक-बँगले पहुँचाकर लौट आईं और पति से बोलीं, "हैरी, अब वापस चलना चाहिए" तब चौंककर उन्होंने घड़ी निकालकर देखते हुए कहा, "माई गॉड! यह तो आठ बजकर बीस मिनट हो गए।"

उन्होंने गाड़ी पर सवार होते समय हरानबाबू से हाथ मिलाकर विदा लते हुए कहा, "आपके साथ बातचीत में साँझ बहुत अच्छी कट गई।"

हरानबाबू ने डाक-बँगले पर लौटकर मजिस्ट्रेट के साथ अपनी बातचीत विस्तारपूर्वक सुनाई। लेकिन गोरा के आने का उन्होंने कोई उल्लेख नहीं किया।

28.किसी अपराध के लिए बिना किसी सुनवाई के सिर्फ गाँव को सबक सिखाने के लिए सैंतालीस आदमियों को हावालात में बंद कर दिया गया था।

मजिस्ट्रेट से भेंट होने के बाद गोरा किसी वकील की खोज में निकला। किसी से उसने सुना कि सातकौड़ी हालदार यहाँ के नामी वकील हैं। सातकौड़ी के घर पहुँचते ही वकील साहब कह उठे, "अरे यह तो गोरा है! तुम यहाँ कहाँ?"

गोरा का अनुमान ठीक ही था- सातकौड़ी उसका सहपाठी था। गोरा ने कहा, "घोषपुर के असामियों को ज़मानत पर छुड़कार उनकी पैरवी करनी होगी।"

सातकौड़ी ने कहा, "ज़मानत कौन देगा?"

गोरा बोला, "मैं दूँगा।"

सातकौड़ी ने कहा, "सैंतालीस आदमियों की ज़मानत देना तुम्हारे बूते का है?"

गोरा ने कहा, "अगर मुख्त्यार लोग मिलकर ज़मानत दें तो उनकी फीस मैं दे दूँगा।"

सातकौड़ी ने कहा, "उसमें कुछ कम खर्च नहीं होगा।"

दूसरे दिन मजिस्ट्रेट के इजलास में ज़मानत की दरख़ास्त पेश की गई। मजिस्ट्रेट ने कल मिले मैले कपड़े और पगड़ी वाले दबंग आदमी की ओर एक नज़र डाली और दरख़ास्त नामंज़ूर कर दी। चौदह वर्ष के लड़के से लेकर अस्सी वर्ष के बूढ़े तक हवालात में सड़ने के लिए छोड़ दिए गए।

सातकौड़ी से गोरा ने उसकी ओर से केस लड़ने का अनुरोध किया।

सातकौड़ी ने कहा, "गवाह कहाँ मिलेंगे? जो गवाह हो सकते थे वही सब तो आसामी हैं। इनके अलावा साहब को मारने के इस कांड की जाँच के मारे सारे इलाके के लोगों की नाक में दम है मजिस्ट्रेट समझता है कि भीतर-ही-भीतर इसमें भद्र लोगों का भी हाथ है, शायद मुझ पर भी करता हो,कौन जाने। अंग्रेज़ी अख़बार बराबर लिख रहे हैं

कि देशी लोगों के हौसले इतने बढ़ जाएँगे तो अरक्षित, असहाय अंग्रेज़ों का निश्चिंत रहना मुश्किल हो जाएगा। इधर तो ऐसी हालत हो गई है कि देशी लोग देश में टिक ही नहीं पाते हैं। मैं जानता हूँ कि अन्याय हो रहा है, लेकिन कोई उपाय नहीं है।'

गरजकर गोरा ने कहा, 'उपाय क्यों नहीं है?"

हँसकर सातकौड़ी ने कहा, "जैसे तुम स्कूल में थे अब तक ठीक वैस-के-वैसे ही हो। उपाय इसलिए नहीं है कि हम लोगों के घर में बीवी-बच्चे हैं- रोज़ कमाकर न लाएँ तो कई लोगों का फाका करना पड़ जाय। दूसरे का बोझ अपने ऊपर औट लेने को तैयार होने वाले व्यक्ति दुनिया में कम ही होते हैं- और उस देश में तो और भी कम जिसमें कुनबा भी कुछ छोटा नहीं होता। जिसके घर दस खाने वाले हैं वह उन दस को छोड़कर दूसरे दस आदमियों की ओर देखने का समय कहाँ से पाएगा?"

गोरा ने कहा, "तो इन लोगों के लिए तुम कुछ नहीं करोगे? हाईकोर्ट के सामने यदि.... "

अधीर होकर सातकौड़ी ने कहा, "अरे, तुम यह क्यों नहीं देखते कि एक अंग्रेज़ ज़ख्मी हुआ है। हर अंग्रेज़ राजा है- छोटे अंग्रेज़ को मारना भी छोटे किस्म का राज-विद्रोह ही है। जिसका कोई सुफल नहीं निकलने वाला उसके लिए बेकार में दौड़-धूप करके ख़ामख़ाह मजिस्ट्रेट से भी बिगाड़ूँ, यह मुझसे नहीं होगा।"

गोरा ने निश्चित किया कि अगले दिन साढ़े दस बजे की गाड़ी से कलकत्ता जाकर देखेगा कि वहाँ के किसी वकील की मदद से कुछ हो सकता है या नहीं। इसी समय लेकिन एक और बाधा आ खड़ी हुई।

यहाँ के कार्यक्रम के सिलसिले में कलकत्ता के विद्यार्थियों की एक टीम के साथ स्थानीय विद्यार्थियों का क्रिकेट-मैच निश्चित हुआ था। अभ्यास के लिए कलकत्ता के लड़के आपस में खेल रहे थे कि एक लड़के के पैर में गेंद से गहरी चोट लग गई। मैदान से लगा हुआ एक बड़ा पोखर था। जख्मी लड़के को किनारे पर लिटाकर उसके दो साथी कपड़ा पानी में भिगोकर उसके पैर में पट्टी बाँध रहे थे कि अचानक कहीं से एक पहरेदार ने आकर एक छात्र को ज़ोर से धक्का देकर भद्दी गालियाँ देना शुरू कर दिया। पोखर पीने के पानी के लिए ही था, उसमें उतरना मना था, यह बात कलकत्ता के विद्यार्थी नहीं जानते थे; जानते भी होते तो अकस्मात् ऐसा अपमान सहने का उन्हें अभ्यास नहीं था। उनके बदन भी गठे हुए थे। उन्होंने अपमान का यथोचित प्रतिकार शुरू कर दिया। यह दृश्य देखकर चार-पाँच सिपाही और दौड़े हुए आ गए।

ठीक इसी समय गोरा भी वहाँ से गुज़रा। छात्र गोरा को पहचानते थे- उनके साथ गोरा कई बार क्रिकेट खेल चुका था। गोरा ने जब देखा कि विद्यार्थियों को पकड़कर मारते-मारते ले जाया जा रहा है, तब वह सह नहीं सका। बोला, "ख़बरदार जो मारा तो।"

पहरेदार और उसके साथियों ने उसे भी भद्दी गाली दी, इस पर गोरा ने घूँसे और लातें जमाकर ऐसा बखेड़ा कर दिया कि भीड़ लग गई। इधर देखते-देखते विद्यार्थियों का झुंड भी इकट्ठा हो गया और गोरा के उत्साह से शह पाकर वे भी पुलिस पर टुट पड़े। पहरेदार और उसके साथी मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए। सारी घटना में राह चलते लोगों को बड़ा मज़ा आया। लेकिन कहने की ज़रूरत नहीं कि यह तमाशा गोरा के लिए तमाशा न रहा।

लगभग तीन-चार बजे, डाक-बँगले में जब विनय, हरानबाबू और लड़कियाँ अभ्यास कर रही थीं, विनय के पिरिचित छात्रों ने आकर खबर दी कि गोरा ओर कुछ-एक विद्यार्थियों को गिरफ्तार करके पुलिस ने हवालात में बंद कर दिया है, अगले दिन पहले इजलास में ही मजिस्ट्रेट साहब के सामने उनकी पेशी होगी।

गोरा हवालात में! खबर सुनकर हरानबाबू को छोड़ सब लोग चौंक उठे। दौड़ा हुआ विनय पहले अपने सहपाठी सातकौड़ी हालदार के पास गया,उसे सारी बात बताकर उसके साथ हवालात पहुँचा।

सातकौड़ी ने गोरा की ओर पैरवी करने और उसे ज़मानत पर छुड़ाने की कोशिश का प्रस्ताव किया तो गोरा ने कहा, "नहीं, मैं वकील भी नहीं करूँगा और मुझे ज़मानत पर छुड़ाने की चेष्टा भी नहीं करनी होगी।"

"यह भी कोई बात हुई?" विनय की ओर मुड़कर सातकौड़ी ने कहा, "देखा इसको? कौन कहेगा कि गोरा स्कूल से निकल आया है! इसकी अक्ल अभी भी ठीक वैसी ही है!"

गोरा ने कहा "संयोग से मेरे पास साधन हैं, दोस्त हैं, इसीलिए मैं हवालात से बच जाऊँ, यह मैं नहीं चाहता। हमारे देश की जो धर्मनीति है उसके अनुसार न्याय करने की ज़िम्मेदारी राजा की है, प्रजा के साथ अन्याय हो यह राजा का ही अधर्म है। लेकिन इस राज में यदि वकील की फीस न जुटा सकने पर प्रजा को हवालात में सड़ने या जेल में मरना पड़े, सिर पर राजा के रहते भी पैसा देकर इन्साफ खरीदने की

कोशिश में लुट जाना पड़े, तो ऐसे अन्याय के लिए एक धेला भी मैं ख़र्च करना नहीं चाहता।"

सातकौड़ी ने कहा, "लेकिन काज़ी के राज में तो घूस देने के लिए ही सिर बेचना पड़ता था।"

गोरा ने कहा, "लेकिन घूस देने का विधान राजा का तो नहीं था। जो काज़ी बुरा होता था वह घूस लेता था- आज-कल भी वही हाल है। लेकिन आज-कल इंसाफ के लिए राजा के सामने जाने पर चाहे वादी हो चाहे प्रतिवादी, चाहे दोषी हो चाहे निर्दोष, प्रजा को रोना ही पड़ता है। जो ग़रीब है,इन्साफ की लड़ाई में उसके लिए हार-जीत दोनों ही में सर्वनाश है। फिर जहाँ राजा वादी है और हम-जैसे लोग प्रतिवादी, वहाँ उनकी ओर से ही सब वकील बैरिस्टर हैं, और अगर मैं जुटा सकूँ तो ठीक है, नहीं तो मेरा भाग्य। इंसाफ के लिए अगर सफाई वकील की ज़रूरत नहीं है तो फिर सरकारी वकील किसलिए? और अगर ज़रूरत है तो फिर गवर्नमेंट के खिलाफ अपना वकील स्वयं खोजने की मजबूरी क्यों हो? यह क्या प्रजा के साथ शत्रुता नहीं है? कैसा राजधर्म है यह?"

सातकौड़ी ने कहा, "बिगड़ते क्यों हो भाई। सिविलाइजेशन कोई सस्ती चीज़ तो नहीं है। इंसाफ में बारीकी के लिए कानून में भी बारीकी आवश्यक है-कानून में बारीकी होने पर बिना पेशेवर कानूनदाँ के काम नहीं चलता- पेशे की बात आते ही बिक्री-ख़रीद की बात आ जाती है इसलिए सभ्यता की अदालत में इंसाफ अपने-आप दुकानदारी हो जाता है इसी से जिसके पास पैसा नहीं है उसके ठगे जाने की संभावना रहती ही है। यदि तुम राजा होते तो क्या करते भला?"

गोरा बोला, "यदि ऐसा कानून बनाता कि हज़ार-डेढ़ हज़ार रुपया वेतन पाने वाले जज की अक्ल के लिए भी उससे भुगत पाना असंभव होता, तो अभागे वादी-प्रतिवादी दोनों पक्षों के लिए सरकारी खर्च पर वकील नियुक्त करता। ठीक इंसाफ होने का ख़र्चा प्रजा के सिर मढ़कर अपनी न्याय-व्यवस्था पर गर्व करता हुआ मुगल-पठान राजाओं को गालियाँ न देता।"

सातकौड़ी ने कहा, "ठीक है, लेकिन अभी वह शुभ दिन जब नहीं आया, तुम राजा भी नहीं हुए, जब आज तुम सभ्य राजा की अदालत में आसामी बने पेशे हो तब तुम्हें या तो अपनी गाँठ से पैसा खर्च करना होगा या किसी दोस्त-वकील की शरण लेनी होगी, नहीं तो और किसी प्रकार तो मुसीबत टलती नहीं।"

हठ करके गोरा ने कहा, "कोई कोशिश न करने से जो सिर पर आयेगी भले ही वह मेरे सिर पर आए। बिल्कुल असहाय की इस राज्य में जो गति होगी वही मेरी भी हो।"

विनय ने भी बड़ी मिन्नतें कीं, लेकिन गोरा ने सबकी अनसुनी कर दी। उसने विनय से पूछा, "अचानक तुम यहाँ कैसे आ पहुँचे?"

विनय का चेहरा ज़रा तमतमा उठा। गोरा आज हवालात में न होता तो शायद विनय कुछ विद्रोह के स्वर में ही अपने वहाँ होने का कारण बता देता। लेकिन आज स्पष्ट बात उसके मुँह पर नहीं आई। वह बोला, "मेरी बात फिर होगी, अभी तो तुम्हारी.... "

गोरा ने कहा, "मैं तो आज सरकारी मेहमान हूँ। मेरी चिंता तो सरकार स्वयं कर रही है, तुम लोगों को कोई चिंता करने की ज़रूरत नहीं है!"

विनय जानता था कि गोरा को डिगाना संभव नहीं, इसलिए वकील करने की कोशिश उसने छोड़ दी। बोला, "यहाँ का तो तुम खा नहीं सकोगे,बाहर से कुछ खाना भेजने का प्रबंध कर दूँ।"

अधीर होकर गोरा ने कहा, "विनय, क्यों तुम बेकार में दौड़-धूप करते हो? मुझे बाहर से कुछ नहीं चाहिए। सबके भाग्य में हवालात में जो आता है उससे अधिक मैं कुछ नहीं चाहता।"

लाचार होकर विनय डाक-बँगले लौट आया। सुचरिता रास्ते की ओर वाले एक सोने के कमरे में दरवाज़ा बंद करके खिड़की खोले विनय के लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी। किसी प्रकार भी दूसरों का साथ या उनकी बातचीत उसे सहन नहीं हो पा रही थी।

जब सुचरिता ने देखा कि विनय उदास और चिंतित चेहरा लिए डाक-बँगले की ओर आ रहा है तब उसके हृदय में अनेक आशंकाएँ उठने लगीं। बड़ी मुश्किल से अपने को शांत करके एक किताब हाथ में लेकर वह बैठने के कमरे में आई। सिलाई का काम ललिता को बिल्कुल नहीं रुचता,लेकिन आज एक कोने में चुपचाप बैठी वह सिलाई कर रही थी, लावण्य सुधीर के साथ अंग्रेज़ी शब्द बनाने का खेल खेल रही थी, लीला दर्शक बनी बैठी थी। हरानबाबू वरदासुंदरी के साथ आगामी कल के उत्सव के बारे में बातचीत कर रहे थे। विनय ने आज सबेरे पुलिस के साथ गोरा के झगड़े का सारा किस्सा ब्यौरेवार सुना दिया। सुचरिता स्तब्ध बैठी रही, ललिता की गोद से सिलाई नीचे गिर गई और उसका मुँह लाल हो आया।

वरदासुंदरी ने कहा, "आप कोई चिंता न कीजिए, विनय बाबू- आज शाम को ही मजिस्ट्रेट साहब की मेम से मैं गौर बाबू के लिए कहूँगी।"

सुधीर ने कहा, "उसके बचाव के लिए तो कोई प्रबंध करना होगा।"

ज़मानत पर छुड़वाने और वकील नियुक्त करने के बारे में गोरा ने जो आपत्तियाँ की थीं विनय ने वे सब बता दीं। सुनकर हरानबाबू चिढ़कर बोले, "यह सब बेकार की हेकड़ी है।"

ललिता के मन का भाव हरानबाबू के प्रति जैसा भी रहा हो, पर अब तक वह उनका सम्मान करती आई थी और कभी उनके साथ बहस में नहीं पड़ी थी। आज ज़ोर से सिर झटककर बोल उठी, "बिल्कुल बेकार नहीं है। गौर बाबू ने जो किया है बिल्कुल ठीक किया है। मजिस्ट्रेट सिर्फ हमको दबाता रहेगा और हम अपनी रक्षा खुद करेंगे? उसकी मोटी तनख्वाह जुटाने के लिए टैक्स भी भरना होगा, और फिर उसी से अपनी जान छुड़ाने के लिए गाँठ से वकील की फीस भी देनी होगी? ऐसा इंसाफ पाने से जेल जाना कहीं अच्छा है।"

हरानबाबू ललिता को अब तक बच्चा ही समझते आए थे- उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि उसकी भी कोई राय हो सकती है। उसी ललिता के मुँह से तीखी बात सुनकर वह हक्के-बक्के रह गए। फिर उसे डाँटते हुए बोले, "तुम ये सब बातें क्या जानो! जो दो-चार किताबें रटकर कालिज पास कर आए हैं, जिनका न धर्म है न धारणा, उनके मुँह से गैर-ज़िम्मेदाराना पागलपन की बकवास सुनकर तुम्हारा सिर फिर गया है।"

यह कहकर हरानबाबू ने कल शाम को मजिस्ट्रेट के साथ गोरा के साक्षात् की और उसके बारे में उनसे मजिस्ट्रेट की जो बातचीत हुई थी उसका पूरा ब्यौरा सुना दिया। विनय को घोषपुर गाँव का मामला मालूम न था। बात सुनकर वह शंकित हो उठा, उसने समझ लिया कि गोरा को मजिस्ट्रेट सहज ही न छोड़ेंगे।

जिस मतलब से हरान ने बात सुनाई थी उससे ठीक उल्टा असर हुआ। गोरा को देखने की बात जो अब तक उन्होंने छिपा रखी थी, उससे जो ओछापन झलकता था वह सुचरिता को चुभ गया। गोरा के प्रति उनकी प्रत्येक बात से एक व्यक्तिगत ईर्ष्या टपकती थी। गोरा की इस मुसीबत के समय उनके व्यवहार के कारण सभी को उनके प्रति एक घृणा हुई। सुचरिता अब तक चुप ही थी, कुछ कहने को उसका मन अकुला रहा था, किंतु अपने को रोककर वह किताब खोलकर काँपते हाथों से उसके

पन्ने पलटने लगी। ललिता ने उध्दत भाव से कहा, "हरानबाबू की राय में और मजिस्ट्रेट की राय में चाहे जितनी समानता हो, घोषपुर के मामले में गौरमोहन बाबू की बड़ाई ही सबित होती है।"

29.छोटे लाल साहब आज पधारेंगे, इसलिए मजिस्ट्रेट साहब ठीक साढ़े दस बजे इजलास पहुँच गए जिससे दिन का काम जल्दी निबटा लें।

कॉलेज के लड़कों की ओर से पैरवी करते हुए सातकौड़ी बाबू ने अपने दोस्त को भी बचाने की चेष्टा की। मामले का रुख देखकर उन्होंने समझ लिया था कि अपराध स्वीकार करना ही यहाँ फायदेमंद होगा। लड़के मनचले होते ही हैं, वे अभी निर्बोध हैं, इत्यादि दलीलें देकर उनकी ओर से उन्होंने क्षमा-प्रार्थना की। मजिस्ट्रेट ने विद्यार्थियों को जेल ले जाकर प्रत्येक की उम्र और उसके अपराध के अनुसार पाँच से लेकर पच्चीस तक बेंत लगाने की सज़ा सुना दी। गोरा का कोई वकील नहीं था। खुद अपनी पैरवी करते हुए पुलिस के अत्याचार के बारे में उसके कुछ कहने की शुरुआत करते ही मजिस्ट्रेट ने तिरस्कार पूर्वक उसे रोक दिया और पुलिस के काम में हस्तक्षेप करने के अपराध में उसे एक मास के कठिन कारावास की सज़ा सुनाते हुए यह भी कहा कि इतनी हल्की सज़ा देकर वह विशेष दया दिखा रहे हैं।

सुधीर और विनय अदालत में उपस्थित थे। विनय गोरा के मुँह की ओर नहीं देख सका। मानो उसका दम घुटने लगा, वह जल्दी से कचहरी से बाहर निकल आया। सुधीर ने उससे डाक-बँगले पर लौटकर स्नान-भोजन करने का अनुरोध किया, पर वह उसे अनसुना करके मैदान पार करते-करते राह में ही एक पेड़ के नीचे बैठ गया और सुधीर से बोला, "तुम डाक-बँगले लौट जाओ, मैं बाद में आऊँगा।"

सुधीर चला गया।

कितना समय ऐसे ही बीत गया, इसका विनय को होश न रहा। सूर्य शिखर तक पहुँचकर पश्चिम की ओर उतरने लगा था तब एक गाड़ी ठीक उसके सामने आकर रुकी। मुँह उठाकर विनय ने देखा, सुधीर और सुचरिता गाड़ी से उतरकर उसकी ओर आ रहे थे। वह जल्दी से उठ खड़ा हुआ। सुचरिता के पास उतरकर आने पर वह जल्दी से उठ खड़ा हुआ। सुचरिता ने पास आकर स्नेह-भरे स्वर में कहा, "विनय बाबू, चलिए!"

सहसा विनय ने लक्ष्य किया कि वे राह चलते लोगों के लिए कौतूहल का विषय बन गए हैं। जल्दी से वह गाड़ी पर सवार हो गया। सारे रास्ते कोई भी कुछ बात न कर सका।

विनय ने डाक-बँगले पर पहुँचकर देखा, वहाँ लड़ाई चल रही है। ललिता इस बात पर अड़ी हुई थी कि किसी तरह वह मजिस्ट्रेट के घर नहीं जाएगी। वरदासुंदरी बड़ी मुश्किल में पड़ गई थीं। हरानबाबू ललिता- जैसी बच्ची के इस असंगत विद्रोह से क्रोधवश पागल हो रहे थे। बार-बार वह कहे जा रहे थे- आजकल के लड़के-लड़कियाँ न जाने क्यों ऐसे बिगड़ रहे हैं, कोई अनुशासन ही नहीं मानना चाहता। ऐरे-गैरे लोगों की संगत में फिजूल बातचीत करते रहने का यही नतीजा होता है।

ललिता ने विनय के आते ही कहा, "विनय बाबू, मुझे माफ कर दीजिए, मैंने आपके निकट भारी अपराध किया है। तब आपने जो कहा था मैं कुछ समझ नहीं सकी थी। हम लोग बाहर की हालत बिल्कुल नहीं जानतीं इसीलिए ऐसा उलटा समझ लेती हैं। पानू बाबू कहते हैं कि भारतवर्ष में मजिस्ट्रेट का यह शासन नियति का विधान है- ऐसा है तो फिर इस शासन को तन-मन-वचन से शाप देने की इच्छा जगाना भी उसी नियति का ही विधान है।"

हरानबाबू बिगड़कर कहने लगे, "ललिता, तुम.... "

हरानबाबू की ओर पीठ फेरकर खड़े होते हुए ललिता ने कहा, "चुप रहिए, मैं आप से बात नहीं कर रही। विनय बाबू, किसी की मत सुनिएगा। आज अभिनय किसी तरह नहीं हो सकेगा।"

जल्दी से वरदासुंदरी ने ललिता की बात काटते हुए कहा, "ललिता, तू तो बड़ी अजीब लड़की है! विनय बाबू को आज नहाने-खाने भी नहीं देगी?डेढ़ बज गया है, उसकी भी खबर है? देख तो उनका चेहरा कैसा सूख रहा है।"

विनय ने कहा, "हम लोग यहाँ उसी मजिस्ट्रेट के मेहमान हैं- इस घर में मेरा स्नान-भोजन अब नहीं हो सकेगा।"

वरदासुंदरी ने विनय को समझाने की बड़ी कोशिश की, खुशामद भी की। लड़कियों को चुप देखकर उन्होंने बिगड़कर कहा, "तुम सबको हुआ क्या है? सुचि, विनय को ज़रा तुम्हीं समझाओ न। हम लोगों ने वायदा किया है- इतने लोग बुलाए गए हैं-

आज तो किसी तरह निभाना ही होगा, नहीं तो वे लोग क्या सोंचेगे भला? फिर कभी उनके सामने मुँह न दिखा सकेंगे।"

चुपचाप सुचरिता सिर झुकाए बैठी रही।

नदी दूर नहीं थी, विनय स्टीमर-घाट की ओर चला गया। स्टीमर लगभग दो घंटे बाद छूटेगा- कल आठ बजे के लगभग कलकत्ता पहुँच जाएगा।

उत्तेजित होकर हरानबाबू विनय और गोरा की बुराई करने लगे। सुचरिता ने जल्दी से कुर्सी से उठकर साथ के कमरे में जाकर किवाड़ बंद कर लिए। थोड़ी देर बाद ही ललिता ने किवाड़ ठेलकर कमरे में प्रवेश किया तो देखा, दोनों हाथों से मुँह ढके सुचरिता बिस्तर पर पड़ी है।

ललिता ने भीतर से दरवाजे बंद कर लिए और सुचरिता के पास बैठकर धीरे-धीरे उसके सिर के बालों को उँगलियों से सहलाने लगी। बहुत देर बाद सुचरिता जब शांत हो गई तब ज़बरदस्ती उसके हाथ चेहरे के सामने से हटाकर ललिता उसके कान से मुँह सटाकर कहने लगी, "दीदी, चलो हम लोग यहाँ से कलकत्ता लौट चलें- आज मजिस्ट्रेट के यहाँ तो नहीं जा सकते।"

सुचरिता ने बहुत देर तक इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। ललिता जब बार-बार कहने लगी तब वह बिस्तर पर उठ बैठी और बोली, "यह कैसे हो सकता है, री। मेरी तो आने की ज़रा भी इच्छा नहीं थी- जब बाबा ने भेज दिया है तब जिस काम के लिए आई हूँ वह पूरा किए बिना कैसे लौट सकती हूँ?"

ललिता ने कहा**, "**बाबा ये सब बातें कहाँ जानते थे**?** जानते तो कभी हमें यहाँ रुकने को न कहते।**"**

सुचरिता ने कहा**, "**यह मैं कैसे जानूँ**,** भला**?"**

ललिता, "दीदी, क्या तू जा सकेगी? कैसे जाएगी भला? फिर बन-ठनकर स्टेज पर खड़े होकर कविता सुनानी होगी। मेरी तो जबान कट जाए तब भी बात नहीं निकलेगी!"

सुचरिता ने कहा, "वह तो जानती हूँ, बहन, लेकिन नरक यंत्रणा भी सहनी ही होती है। अब और तो कोई चारा नहीं है। आज का दिन जीवन-भर भूल नहीं सकूँगी।"

ललिता सुचरिता की इस बेचारगी पर बिगड़कर बाहर निकल गई। जाकर माँ से बोली "माँ, क्या तुम जा नहीं रहीं?"

वरदासुंदरी ने कहा, "तू पागल तो नहीं हो गई! रात को नौ बजे के बाद जाना है।"

ललिता ने कहा, "मैं कलकत्ता जाने की बात कर रही हूँ।"

वरदासुंदरी, "ज़रा इस लड़की की बात तो सुनो?"

सुधीर ने ललिता से पूछा, "सुधीर, तो तुम भी यहीं रहोगे?"

गोरा की सज़ा से सुधीर का मन व्याकुल ज़रूर था, लेकिन बड़े-बड़े साहबों के सामने अपनी विद्या दिखाने का लोभ छोड़ देना उसके वश की बात नहीं थी। उसने कुछ अस्पष्ट-सा गुनगुना दिया, जिससे यही समझ में आया कि उसे संकोच तो है, पर वह यहीं रह जाएगा।

वरदासुंदरी ने कहा, "गड़बड़ी में इतनी देर हो गई अब और देर करने से नहीं चलेगा। अब साढ़े पाँच बजे तक बिस्तर से कोई उठ न सकेगा- सबको आराम करना होगा, नहीं तो रात को थकान से मुँह सूख जाएगा- देखने में अच्छा नहीं लगेगा।"

उन्होंने यों कह-कहकर सबको ज़बरदस्ती सोने के कमरों में ले जाकर लिटा दिया। सभी सो गए, केवल सुचरिता को नींद न आई और दूसरे कमरे में ललिता भी अपने बिस्तर पर बैठी रही।

रह-रहकर स्टीमर की सीटी सुनाई देने लगी।

जब स्टीमर छूटने ही वाला था और खलासी सीढ़ी उठाने की तैयारी कर रहे थे, तब डेक से विनय ने देखा, एक भद्र महिला तेज़ी से जहज़ की ओर बढ़ी आ रही है। उसकी वेश-भूषा से वह विनय को ललिता-सी ही जान पड़ी किंतु सहसा वह ऐसा विश्वास नहीं कर सका। अंत में ललिता के निकट आ जाने पर जब बिल्कुल संदेह न रहा तब उसने एक बार सोचा कि शायद ललिता उसे लौटा ले जाने के लिए आई हो-लेकिन ललिता ही तो मजिस्ट्रेट का निमंत्रण न मानने के लिए अड़ी हुई थी। ललिता स्टीमर पर सवार हो गई, खलासियों ने सीढ़ी उठा ली। शंकित-सा विनय ऊपर डेक से नीचे उतरकर ललिता के सामने आ खड़ा हुआ। ललिता बोली, "मुझे ऊपर ले चलिए!"

विस्मित होकर विनय ने कहा, "जहाज़ तो छूट रहा है।"

ललिता बोली, "मैं जानती हूँ।" और विनय की प्रतीक्षा न करके सामने की सीढ़ी से ऊपर चली गई। स्टीमर सीटियाँ देता हुआ चल पड़ा।

पहले दर्जे के डेक पर ललिता को आराम-कुर्सी पर बिठाकर विनय चुपचाप प्रश्न-भरी ऑंखों से उसक चेहरे की ओर देखने लगा।

ललिता ने कहा, "मैं कलकत्ता जाऊँगी- यहाँ मुझसे किसी तरह नहीं रहा गया।"

विनय ने पूछा, "और वे सब?"

ललिता ने कहा, "अभी तक किसी को मालूम नहीं है। मैं चिट्ठी रखकर आई हूँ- पढ़ेंगे तो पता लगेगा।"

ललिता के इस दु:शाहस से विनय चकित हो गया। सकुचाता हुआ कहने को हुआ, "किंतु.... "

जल्दी से ललिता ने उसे टोकते हुए कहा, "जहाज़ तो छूट गया, अब किंतु-परंतु को लेकर क्या होगा। लड़की होकर जन्मी हूँ इसीलिए चुपचाप सब सह लेना होगा, मैं ऐसा नहीं मानती हमारे लिए भी न्याय-अन्याय और संभव-असंभव है। आज के न्योते में अभिनय करने जाने से आत्महत्या कर लेना मेरे लिए कहीं ज्यादा सुखद है।"

विनय ने समझ लिया कि जो होना था वह हो गया है, अब इस काम की अच्छाई-बुराई सोचकर मन को उलझाने से कोई लाभ नहीं है।

थोड़ी देर चुप रहकर ललिता ने कहा, "देखिए, आपके मित्र गौर मोहन बाबू के प्रति मन-ही-मन मैंने बड़ा अन्याय किया था। न जाने क्यों शुरू से ही उन्हें देखकर, उनकी बात सुनकर मेरा मन उनके विरुध्द हो गया था। वह बहुत ज्यादा ज़ोर देकर अपनी बात कहते थे, और आप सब लोग मानो उनकी हाँ-में-हाँ मिला देते थे- मुझे यह देखकर गुस्सा आता रहता था। मेरा स्वभाव ही ऐसा है, जब देखती हूँ कि कोई बात में या व्यवहार में ज़ोर दिखा रहा है तो मैं बिल्कुल सहन नहीं कर सकती। लेकिन गौरमोहन बाबू केवल दूसरों पर ही ज़ोर नहीं दिखाते, अपने को भी वैसे ही काबू में रखते हैं- यही सच्ची ताकत है। ऐसा आदमी मैंने नहीं देखा।"

ललिता इस प्रकार बोलती ही चली गई। केवल गोरा के बारे में उसे अनुताप हो रहा हो इसलिए यह ये सब बातें कह रही हो, बात इतनी ही नहीं थी। वास्तव में उसने जोश

में आकर जो काम कर डाला था उसका संकोच ही उसके मन के भीतर उमड़ आना चाहता था। बार-बार यह दुविधा मन में उठ आती थी कि यह काम शायद ठीक नहीं हुआ। विनय के साथ स्टीमर पर ऐसे अकेले बैठे रहना कितने असमंजस की बात हो सकती है, इससे पहले यह वह सोच भी नहीं सकी। लेकिन लज्जा दिखाने से तो यह मामला और भी लज्जाजनक हो जाएगा, इसीलिए वह प्राण-पण से चेष्टा करके बातें किए जा रही थी। विनय के मुँह से कोई बात ही नहीं निकल रही थी। एक ओर गोरा का दु:ख और दूसरी ओर इस बात की ग्लानि को लेकर इस आकस्मिक परिस्थिति का संकट, सबने मिलकर विनय को मूक कर दिया था।

पहले कभी ऐसा होता तो ललिता के इस दु:साहस पर विनय के मन में तिरस्कार का ही भाव उदित होता, लेकिन आज वैसा नहीं हुआ। इतना ही नहीं, उसके मन में जो विस्मय उदित हुआ था उसमें श्रध्दा भी मिली हुई थी। साथ ही एक आनंद भी था कि उनके सारे गुट में गोरा के अपमान के प्रतिकार की-चाहे सामान्य प्रतिकार की भी-चेष्टा करने वाले केवल विनय और ललिता ही थे। विनय को तो इसके लिए विशेष कुछ तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी, लेकिन ललिता को अपने काम के फलस्वरूप बहुत दिनों तक काफी कष्ट भोगना पड़ेगा। और इसी ललिता को बराबर विनय गोरा का विरोध समझता आया था! विनय जितना ही सोचता रहा उतना ही ललिता के इस बिना अंत सोचे-समझे साहस पर और अन्याय के प्रति एकांत घृणा के भाव पर विनय को श्रध्दा होने लगी। कैसे, क्या कहकर वह इस श्रध्दा को प्रकट कर सकता है, कुछ सूझ न सका। उसक मन में बार-बार यह बात आने लगी कि ललिता उसे जो साहसहीन और दूसरों का मुँह जोहने वाला कहकर तिरस्कार करती थी, वह ठीक ही था। वह तो कभी किसी विषय में भी अपने सब आत्मीय-बन्धुओं की निंदा-प्रशंसा की उपेक्षा करके साहसपूर्ण आचरण के द्‍वारा अपना मत प्रकाशित न कर सकता। उसने जो कई बार गोरा को कष्ट पहुँचने के डर से, अथवा कहीं गोरा उसे कमजोर न समझ ले इस आशंका से अपने स्वभाव का अनुसरण नहीं किया, और कई बार बाल की खाल उतारने वाली दलीलों से अपने को यह भुलावा देने की चेष्टा की है कि गोरा की राय उसकी राय है, आज मन-ही-मन यह स्वीकार करके उसने ललिता को उसके स्वाधीन बुध्दि-बल के कारण अपने से कहीं श्रेष्ठ मान लिया। इससे पहले वह मन-ही-मन अनेक बार ललिता की बुराई भी करता रहा था। यह याद करके उसे शर्म आने लगी। उसने यहाँ तक चाहा कि ललिता से क्षमा माँग ले, किंतु कैसे क्षमा माँगे, यह वह नहीं सोच सका। ललिता की कमनीय स्त्री-मूर्ति अपने आंतरिक तेज के कारण विनय की ऑंखों में ऐसी महिमामई होकर दिखाई दी कि नारी के इस अपूर्व

परिचय से विनय ने अपने जीवन को धन्य माना। अपने सारे घमंड, सारी क्षुद्रा को उसने इस माधुर्य-मंडित शक्ति के आगे उत्सर्ग कर दिया।

गोरा - Gora in Hindi

1. गोरा अध्याय
2. गोरा अध्याय
3. गोरा अध्याय
4. गोरा अध्याय
5. गोरा अध्याय
6. गोरा अध्याय
7. गोरा अध्याय
8. गोरा अध्याय
9. गोरा अध्याय
10. गोरा अध्याय
11. गोरा अध्याय
12. गोरा अध्याय
13. गोरा अध्याय
14. गोरा अध्याय
15. गोरा अध्याय
16. गोरा अध्याय
17. गोरा अध्याय
18. गोरा अध्याय
19. गोरा अध्याय
20. गोरा अध्याय